Knowledgeable Research *ISSN 2583-6633* Vol.02, No.02, September, 2023
An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal

Knowledgeable Research
ISSN 2583-6633
Vol.02, No.02, September,2023
http://www.knowledgeableresearch.com/

ध्वनिरूपक विधा में 'नाट्यवल्लरी' एक समीक्षा

डॉ. महावीर प्रसाद साहू
सहायक आचार्य, संस्कृत
राजकीय कला महाविद्यालय, कोटा (राज.)

****

''देवानामिदमामनन्ति मुनयः कान्तं क्रतुं चाक्षुषं,
रुद्रेणेदमुमाकृतव्यतिकरे स्वांगे विभक्तं द्विधा।
त्रैगुणयोद्भवमत्र लोक-चरितं नानारसं दृश्यते,
नाट्यं भिन्नरुचेर्जनस्य बहुधाप्येकं समाराधनम् ।।[1]

संस्कृत वाङ्मय भारतीय चिन्तन धारा व विचार परम्परा का रूचिरदर्पण हैं। 17 वीं सदी तक अपने परम प्रकर्ष को प्राप्त संस्कृत साहित्य 18 वीं, 19वीं शताब्दियों में विषय और रूप की दृष्टि से नई करवटें बदलने लगा। 20 वीं सदी के पूर्वार्ध तक अपनी पृथक् पहचान स्थापित कर चुकी साहित्य की नवीन विधाओं ने संस्कृत जगत् में नवीन स्फूर्ति का संचार किया। श्रव्य-पाठ्य काव्य की अपेक्षा दृश्य-श्रव्य काव्य अधिक रसनीय होता है। इसी का प्रतीक कथन है- ''काव्येषु नाटकं रम्यम्'' संस्कृत नाट्य साहित्य की धारा ईसा पूर्व महाकवि भास से अजस्र प्रवाहमाना रही है।

नाटक लोक वृत्त का अनुकरण होता है अतः लोकवृत्त और लोकरूचि के अनुरूप साहित्य जगत् में अनेक नवीन विधाओं का उदय हुआ। इन नवीन विधाओं में नाटक का स्वरूप और उद्देश्य आदि युगानुरूप बदलते रहे हैं। आज का संस्कृत नाटककार प्राचीन आचार्यों द्वारा सम्मत दस रूपकों व 18 उपरूपकों तक ही सीमित नहीं है, अपितु वह संस्कृत भाषा व नाट्यसाहित्य को जीवन्त बनाये रखने हेतु इन नवीन विधाओं को अपनाने से भी परहेज नहीं कर रहा हैं। आधुनिक संस्कृत नाट्य साहित्य में नृत्य-नाटिका, गीति नाट्य, नुक्कड़ नाटक, मूकाभिनय, ध्वनिरूपक आदि कई नूतन विधाऐं पर्याप्त रूप से प्रचलित व प्रसिद्ध हो रही हैं।

कीवर्ड - नाट्याभिन्नरूचेर्जनस्य, धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायाम् आपाद्यरमाविप्रम्, वलीपलिता, अश्वखुरध्वनि, प्रणयसंदेश, महाभिनिषक्रमणम्, आचन्द्रदिवाकर, प्रतापसिंहीयम्।

****

उद्भव व विकास -

नाट्य विधा के प्राचीनतम स्वरूपों में भाण, प्रहसन, व्यायोग आदि रूपक के अनेक भेदों उपभेदों की विद्यमानता सर्वविदित है। तत्पश्चात् दक्षिण भारत में यक्ष-गान शैली विकसित हुई, तो उसके अनुरूप भी संस्कृत नाटक लिखे गये। 19 वीं सदी में पारसी थियेटरों आदि के प्रभाव से नाटकों में गीतियों का प्रचलन हुआ, तो गीतियों सहित संस्कृत नाटक भी लिखे

Knowledgeable Research *ISSN 2583-6633* Vol.02, No.02, September, 2023
An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal

गये। भारतीय मनीषा का विगत शताब्दियों में अन्य भाषाओं में प्रणीत नाटकों से संपर्क हुआ, जिसके कारण विगत सदियों में युगानुरूप रूपक की अनेक विधाएँ उदित हुई। उनमें से कतिपय काल कवलित हो गयी और कुछ सम्प्रति विकास के पथ पर अग्रेसर हो रही हैं।

इसी क्रम में रेडियो द्वारा नाटकों का प्रसारण प्रारम्भ हुआ तथा लोकरूचि की दृष्टि से वह लोकप्रिय भी हो गया। फलतः ध्वनि-रूपक माध्यम से प्रस्तुत की जाने वाली रेडियो रुपक नामक विधा का प्रचलन अस्तित्त्व में आया। अन्य विधाओं की तरह संस्कृत माध्यम से भी इस विधा में रूपक लिखे जाने लगे। इस प्रकार ध्वनिरूपकों के उदय और विकास में रेडियो का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। संस्कृत के प्रबुद्ध विद्वानों में भी ध्वनि नाट्यों का प्रणयन किया। 'मृच्छकटिकम्' जैसे नाटक का रूपान्तरण तथा 'आदिशंकराचार्यम्' नामक संस्कृत फिल्म भी बड़े पर्दे पर संस्कृत के प्रवेश का जीवन्त प्रमाण है।

लक्षण -

चूँकि रेडियो नाटक मात्र श्रव्य होता है अतः इसे श्रव्य नाटक भी कह सकते है और इसमें ध्वनि की प्रधानता होती है अतः इसे ध्वनि नाटक भी कहा जाता है। डॉ. रामकुमार वर्मा ने भी इसे ध्वनि नाटक ही कहा है। रेडियो नाटक को ध्वनि रूपक, नभोवाणी, ध्वनि नाटक, रेडियो रूपक, श्रव्य नाटक आदि अनेक नामों से अभिहित किया जाता है। संस्कृत व्याकरणशास्त्रियों ने इस विधा को रेडियो रूपक या ध्वनि रूपक नाम से अभिहित कर उसके लक्षण पर विचार किया है। 'नवकाव्यतत्त्वमीमांसा' में रहस बिहारी द्विवेदी जी ने रेडियो रूपक का लक्षण निम्न प्रकार से दिया है:-

''कथ्यते रूपकं किन्तु भेदं दृश्यतयोच्यते
वस्तुतः श्रव्येनवैतद् यतो न प्रेक्ष्यते जनैः।।
प्रसारणेऽस्य चोच्चारेऽभिनेतुः केवलं ध्वनिः।
श्रोतृभिर्व्योमवाणीतः श्रूयतेऽभिनयात्मकः।।
प्रयोगश्चास्य मंचेऽपि क्वचित् संभाव्यते ह्यतः।
दृश्य-श्रव्यमयं चैतद् रेडियो-रूपकं मतम् ।।''

इस प्रकार शिल्प की दृष्टि से रेडियो नाटक के रूपक फैंटेसी, रेडियो रूपान्तर मोनोलॉग, संगीतरूपक तथा झलकियाँ आदि अनेक प्रकार है। बदलते हुए आधुनिक परिवेश में 'मृच्छकटिकम्', 'शाकुन्तलम्', 'वेणीसंहारम्' आदि मंत्रोपयोगी 5 या 7 अंको वाले नाटक मंच पर अभिनीत नहीं किये जा सकते। अतः ऐसे रूपक या नाटक लिखे गये जो कम से कम समय में अभिनीत किये जा सकें। वर्तमान में दूरदर्शन, सिनेमा, आकाशवाणी आदि माध्यमों को ऐसे ही नाट्यलेखों की अपेक्षा है। आकाशवाणी जयपुर में सन् 1957 ई. से संस्कृत भाषा के ध्वनि रूपकों का प्रसारण आरम्भ हुआ। तब से आज तक कई मूर्धन्य विद्वानों की लेखनी इस नवीन विधा पर सतत् चलायमान रही है। जिसमें प्रमुख रूप से देवर्षि कलानाथ शास्त्री कृत 'नाट्य-वल्लरी', डॉ. हरिराम आचार्य कृत 'पूर्वशाकुन्तलम्', वेदकुमारी घई कृत 'पुरन्ध्री पञ्चकम्' तथा रमाकान्त शुक्ल आदि प्रभृति विद्वानों का इस नवीन विधा को पल्लवित व पुष्पित करने में महनीय योगदान रहा है।

Knowledgeable Research *ISSN 2583-6633* Vol.02, No.02, September, 2023
An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal

संस्कृत नाट्य-वल्लरी - एक परिचय

राजस्थान की वीर प्रसविनी वसुन्धरा न केवल शौर्य और पराक्रम के लिए विख्यात है, अपितु ज्ञान-गाम्भीर्य एवं सारस्वत साधना के लिए विश्रुत है। 'अपरा काशी' जयपुर निवासी देवर्षि कलानाथ शास्त्री जाज्वल्यमान मौक्तिक माला के सुमेरु हैं और उनके द्वारा रचित नाट्य-वल्लरी ध्वनि रूपकों का उत्तम निदर्शन है। हरिजीवन मिश्र पुरस्कार प्राप्त यह रचना शास्त्री जी की प्रतिभा का चूड़ान्त निदर्शन है। नाट्य साहित्य की आधुनिक विधा रेडियो रूपक को फलीभूत करने में शास्त्री जी का अभूतपूर्व योगदान है। संस्कृत नाट्य वल्लरी मौलिक रेडियो नाटकों का संकलन है। इसमें इन्द्रधनुषी वैविध्य वाली कथावस्तु को आधार बनाकर आठ रेडियो रूपकों को संकलित किया गया है। इसमें से 'महाभिनिष्क्रमणम्' व 'प्रतापसिंहीयम्' नामक रेडियो रूपक जयपुर के आकाशवाणी केन्द्र से प्रसारित हो चुके हैं जिनका प्रयोग नितान्त सफल रहा है। अन्य रूपक भी पहले पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं यथा स्वरमङ्गला में। तत्पश्चात् इनका संकलन शास्त्री जी के द्वारा नाट्य वल्लरी में किया गया। जिनकी संक्षिप्त कथावस्तु इस प्रकार है-

1. नाट्यशास्त्रावतार: - नामक रेडियो रूपक में नाट्य की दैवीयोत्पत्ति को कथानक का आधार बनाया गया है। यह एक संक्षिप्त रेडियो नाटक है जिसे 25 मिनिट में अभिनीत किया जा सकता है। नाट्यशास्त्र के रचयिता भरत के यश को चिरस्थायी बनाने में लेखक की मौलिकता स्पष्ट परिलक्षित होती है।

2. 'महाभिनिष्क्रमणम्' - नामक रेडियो रूपक राजकुमार सिद्धार्थ के निर्गमन पर आधारित है। इसे 30 से 40 मिनिट के समय में अभिनीत किया जा सकता है। इतिहास प्रसिद्ध तथ्यों के साथ कथावस्तु का कल्पनापूर्ण संयोजन में लेखक ने मौलिकता का परिचय दिया है।

3. 'प्रणयसन्देश:' - नामक रेडियो रुपक की कथावस्तु का आधार श्रीमद्भागवद में वर्णित रुक्मणी की कथा है, जिसमें लेखक ने पौराणिक कथावस्तु को आधुनिक श्रोता के रसास्वादन के लिए मानवीय परिप्रेक्ष्य में चित्रित किया है।

4. 'पृथ्वीराजविजय:' - नामक रेडियो रूपक की कथावस्तु प्रामाणिक ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित है। इसमें महाराजा पृथ्वीराज द्वारा संयोगिता स्वयंवर में अज्ञात वेश में जाकर राजकुमारी का आनयन और जयचन्द की सेना का पराभव वर्णित है। रूपक में कथावस्तु की योजना मौलिक कविताओं का पुट तथा तत्कालीन कथाओं के निर्वाह में लेखक की मौलिकता प्रकट होती है।

5. 'प्रतापसिंहीयम्' - नामक ऐतिहासिक रेडियोरूपक में महाराणा प्रताप के मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिये किये गये संघर्ष की कथा प्रेरणादायक शैली में गुम्फित है।

6. 'धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायाम्' - यह ध्वनिरूपक सामाजिक रूपक का उत्तम निदर्शन है। इसमें सामाजिक चेतना जगाने वाले व्यक्ति के आवरण का यथार्थ चित्रण किया गया है।

7. 'कविताया: मूल्यम्' - नामक रेडियो रूपक संस्कृत के कालजयी महाकाव्य किरातार्जुनीयम् के रचयिता भारवि से सम्बद्ध है जिसमें एक प्रसिद्ध किंवदन्ती को नाट्यबद्ध किया गया है तथा कविता के महत्त्व को भी अभिव्यक्त किया गया है।

Knowledgeable Research *ISSN 2583-6633* Vol.02, No.02, September, 2023
An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal

8. 'प्रियदर्शिका '- नामक रेडियोरूपक में महाराज हर्षवर्धन की लिखी हुई प्रियदर्शिका-नाटिका का रूपान्तरण किया गया है।

इस प्रकार संस्कृत नाट्य वल्लरी विविध विषयों वाले आठ ध्वनिरूपकों का संकलन है।

समीक्षा -

सब में व्याप्त होने वाले भाव को तत्त्व कहा गया है इस आधार पर नाट्य का आस्वादन उसके नाटकतत्त्व पर ही आधारित होता है। आचार्य धनञ्जय ने नाटक के मुख्यतया तीन तत्त्व माने है -

वस्तुनेतारसस्तेषां भेदक:[2]

माध्यम के बदल जाने से नाटक के बाह्य रूपान्तर में भले ही परिवर्तन हो जाये, किन्तु उसका भीतरी रूप और चेतना नहीं बदलते। रेडियो रूपक भी नाटक ही है मात्र उनके प्रस्तुतीकरण का माध्यम वैज्ञानिक है। रेडियो नाटक की निजी आवश्यकताओं, विशिष्टताएँ व क्षमताएँ आदि रंगमंचीय नाटकों से भिन्न होती है अतः विद्वानों ने ध्वनि, शब्द, संगीत, कथानक, पात्र आदि को रेडियो नाटक के तत्त्वों के रूप में स्वीकार किया है। अतः रेडियो नाटक के निम्नलिखित तत्त्व माने जा सकते हैं-

1. कथावस्तु या कथानक, 2. नेता अथवा पात्र, 3. रस 4. ध्वनि तत्त्व

कथावस्तु

कथावस्तु नाटक का अपरिहार्य तत्त्व है जिस प्रकार स्तम्भ आधार के बिना खड़ा नहीं किया जा सकता उसी प्रकार नाट्य रचना के लिये न्यूनाधिक कथा आधार नितान्त आवश्यक है। संस्कृत नाट्यवल्लरी में वर्णित कथावस्तु को हम तीन वर्गों में विभाजित कर सकते हैं -

1. राष्ट्रीय चेतना प्रधान कथावस्तु
2. सांस्कृतिक चेतना प्रधान कथावस्तु
3. सामाजिक चेतना प्रधान कथावस्तु

'प्रतापसिंहीयम्' रूपक प्रथम प्रकार रेडियो रूपक है जो स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये अपने प्राणों तक की बलि देने वाले प्रताप के जीवन संघर्ष पर आधारित है इसमें महाराणा प्रताप की मातृभूमि की स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये किये गये संघर्ष का इतिवृत्त सरल व प्रेरणास्पद शैली में गुम्फित हुआ है।

किसी भी राष्ट्र की संस्कृति उसके इतिहास तथा पौराणिक आख्यानों व दृष्टान्तों में प्रतिबिम्बित होती है। यही कारण है कि राष्ट्रीय चेतना के नाटकों में ऐतिहासिक व पौराणिक पृष्ठभूमि महत्त्वपूर्ण होती है इस दृष्टि से संस्कृत नाट्य वल्लरी के अधिकांश रूपक सांस्कृतिक चेतना प्रधान रेडियो रूपक हैं। 'नाट्यशास्त्रावतारः', 'महाभिनिष्क्रमणम्' 'प्रणय-सन्देशः', 'पृथ्वीराजविजयः', 'कवितायाः मूल्यम्' नामक रेडियो रुपक के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। 'प्रणयसन्देशः' और 'पृथ्वीराजविजयः' नामक रूपकों में शास्त्री जी ने ऐतिहासिक घटनाओं का वर्तमान संदर्भ में संपृक्त किया है। सामाजिक चेतना प्रधान नाटकों का मुख्य स्वर सुधारक रहा है। ऐसे नाटकों में कथावस्तु सामाजिक मान्यताओं और रूढ़ियों पर आधारित सामाजिक परिवेश में

Knowledgeable Research *ISSN 2583-6633* Vol.02, No.02, September, 2023
An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal

बदलाव चाहती है। इस दृष्टि से 'धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायाम्' शीर्षक से प्रणीत रेडियोरूपक मौलिक सामाजिक रेडियो रूपक हैं। इसकी विषय वस्तु के माध्यम से लेखक ने धर्मान्धता व बाह्य आडम्बरों पर सटीक व्यङ्ग्य किया है।

इस प्रकार सतरंगी विविधताओं को लिये हुए विषयवस्तु पर लिखे गये इन रूपकों की रचना प्रमुखतः इस लक्ष्य से हुई है कि वह सुबोध हो और सुनते ही श्रोता को समझ में आ सकें। अतः ये सब रेडियो रूपक ध्वनि नाट्य विधा के अनुरूप है।

नेता -

नेता नाटक का केन्द्र बिन्दु व प्राण होता है जिसके इर्द-गिर्द ही रूपक की कथावस्तु परिभ्रमण करती है। संस्कृत नाट्य वल्लरी में संकलित रूपकों में पात्र कथावस्तु के आधार पर ही चुने गये हैं अर्थात् ऐतिहासिक एवं पौराणिक कथावस्तुओं के पात्र ऐतिहासिक व पौराणिक हैं और सामाजिक रूपक के पात्र के रूप में मानव को चित्रित किया गया है ये सब पात्र किसी भी रूप में हो तथापि एक आदर्श उपस्थित करते हैं। जैसे-

'नाट्यशास्त्रावतारः' में ब्रह्मा और भरत केन्द्रीय चरित्र और इन्द्र देव समूह और असुर परिधि गत चरित्र है। 'महाभिनिष्क्रमणम्' रूपक में कुमार सिद्धार्थ केन्द्रीय पात्र है। जो स्वयं सांसारिक भोगों और वैराग्यों के बीच उपस्थित हुए द्वन्द्व का समाधान तपस्या से प्राप्त करते हैं।

'प्रणय सन्देशः' व 'पृथ्वीराजविजयः' रूपकों में क्रमशः कृष्ण रुक्मणी और पृथ्वीराज- संयोगिता प्रमुख पात्र है और रुक्मी-शिशुपाल तथा जयचन्द गौण चरित्र हैं। 'प्रताप सिंहीयम्' रूपक में महाराणा प्रताप केन्द्रीय चरित्र है जिसमें प्रताप के चरित्र के सभी पक्षों वीरता मातृभूमि प्रेम दृढ़ प्रतिज्ञा पालन आदि को नाटककार ने बड़े ही प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया है।

'धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायाम्' में सत्यव्रत मुख्य चरित्र है, जो समाज में व्याप्त कुरीतियों को दूर करने में सफल समाज सेवक सिद्ध हुआ है। इस प्रकार विवेच्य रेडियो संकलन में नाटककार ने पात्रों के चरित्र की सहजता और प्रामाणिकता बनाये रखने की दिशा में विशेष जागरूकता का परिचय दिया है।

रस-

रसास्वादन काव्य का प्रमुख प्रयोजन होने के कारण रस को काव्य की सभी विधाओं का प्रमुख तत्त्व माना जाता है। संस्कृत नाट्यवल्लरी में संकलित ध्वनि रूपकों में शास्त्री जी ने प्रायः सभी रसों का समावेश किया है। कहीं पर शान्त रस की धारा प्रवाहित होती है तो कहीं पर वीररस का शंखनाद और कहीं शृङ्गार रस की वासन्ती खुशबू। जहाँ 'महाभिनिष्क्रमणम्' नामक रूपक में शान्त रस की धारा मन्द मन्द गति से प्रवाहित हो रही है। वहीं दूसरी ओर 'प्रतापसिंहीयम्' नामक रूपक में वीररस युक्त महाराणा प्रताप की प्रतिज्ञा गूंज रही है। इसी प्रकार 'प्रणय सन्देशः' नामक रूपक में शृङ्गार रस से सुगन्धित पवन श्रोता के मन को आकर्षित करती है। वही 'पृथ्वीराज विजयः' नामक रूपक में संयोगिता राजा पृथ्वीराज के शौर्य को देखकर अपना हृदय समर्पित कर देती है। इसी तरह 'नाट्यशास्त्रावतारः' नामक रूपक में वीर व शान्त रस तथा 'धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायाम्' नामक रूपक में समाज सेवा का सन्देश (शान्तरस), तथा 'प्रियदर्शिका' नामक रूपक में स्पष्ट रूप से शृङ्गार रस को अङ्गीरस के रूप में स्वीकार किया गया है।

Knowledgeable Research *ISSN 2583-6633* Vol.02, No.02, September, 2023
An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal

इस प्रकार शास्त्री जी ने अपनी नाट्यवल्लरी में यथास्थान सभी रसों को सभी रूपकों में स्थान दिया है तथा इनका रसोचित दृष्टि से हृदयाकर्षक वर्णन किया है।

ध्वनि

भावाभिव्यक्ति का सशक्त साधन होने के कारण ध्वनि रेडियोनाटक का प्रमुख तत्त्व है। मात्र श्रवणेन्द्रिय पर आश्रित होने के कारण पात्र के समस्त व्यक्तित्व, अवस्था, आत्मा और ध्वनि को कण्ठ्य ध्वनि से ही ध्वनित करना पड़ता है। इसमें वातावरण की पूर्ति के लिए संगीत और ध्वनिफलन का उपयोग करना पड़ता है। इनकी ध्वनियाँ सजीव होती हैं। इसका प्रमुख प्रयोजन उचित वातावरण का निर्माण होता है। इसके प्रमुख तत्त्व भाषा, ध्वनिप्रभाव और संगीत है। जिनका समुचित प्रयोग कर शास्त्री जी ने अपने ध्वनिरूपक में उचित वातावरण का निर्माण किया है। भाषा के प्रयोग की दृष्टि से शास्त्री को पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है। संस्कृत शब्दभण्डार से जहाँ जो शब्द उपयुक्त हो वहीं वह शब्द नृत्य करता हुआ समक्ष उपस्थित हो जाता है। इसके प्रयोग में शास्त्री जी सिद्धहस्त हैं।

यथा: आपामरमाविम्[3], आचन्द्रदिवाकर[4], तौर्याश्रिक, आहिण्यमानः जीर्णहतम्[5], विजहिष्यमान-वलीपलिता, अनङ्गलेखसंकर्षणः आदि अनेक शब्द प्रमाण रूप से उद्धृत किये जा सकते हैं।

ध्वनि प्रभाव से रेडियो रूपक में एक प्रकार की सघनता आ जाती हैं, जिससे स्वतः ज्ञात होता रहता है कि पात्रों का अभिनय शून्य न होकर एक ठोस धरातल पर हो रहा है। संस्कृत नाट्य वल्लरी में हर्ष ध्वनि, शून्य रात्रि को सूचित करने वाली ध्वनि प्रातः कालीन वाद्य-ध्वनि मङ्गलवाद्यध्वनि[6] युद्धस्थलीय वाद्य ध्वनि, करूण स्थिति, जनक मुरली की मन्द मन्द ध्वनि आदि विभिन्न प्रकार की ध्वनियाँ ध्वनि प्रभाव का संकेत देती है ।

यथा - 'प्रणय-सन्देशः' रूपक के प्रथम प्रक्रम में 'मालवाद्यध्वनि' तथा षष्ठ प्रक्रम में युद्धस्थलीय ध्वनि।''[7]

पृथ्वीराज विजयः' रूपक में घण्टा, शंख मन्दिर में वेदपाठध्वनि[8] तथा अश्वखुरध्वनि'।[9]

ध्वनि 'धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायाम्' रूपक के द्वितीय प्रक्रम में कोलाहल व विवाहमन्त्र धनि।[10]

इस प्रकार ये ध्वनियाँ वातावरण निर्माण और अभिनय को सजीव बनाने में सहायक होती है।

संगीत का प्रयोग रेडियो नाटक में अनेक प्रयोजनों से किया जाता है। जैसे- दृश्य परिवर्तन में, आरम्भ में, अन्त में, परिवेश की सूचना के लिए और वातावरण निर्माण आदि में। इन रूपकों में संगीत व्यवहार स्वतंत्र रूप से न होकर ध्वनिप्रभाव के साथ मिश्रित रूप से हुआ है।

इस प्रकार संस्कृत नाट्यवल्लरी में ध्वनि तत्त्व कथावस्तु, नेता और रस तीनों तत्त्वों के पोषक तत्त्व के रूप में उभरकर सामने आया है।

इस प्रकार रेडियो नाट्य तत्त्वों के आधार पर संस्कृत - नाट्यवल्लरी की शास्त्रीय समीक्षा के फलस्वरूप यही प्रस्थापित होता है कि नाटककार ने जहाँ एक ओर रूपकों के माध्यम से आदर्शोन्मुखी सन्देश प्रेषित किया है वहीं दूसरी ओर एक नयी विधा को संस्कृत भाषा के माध्यम से पोषित करने के प्रति भी वह पर्याप्त रूप से सजग रहे हैं। विवेच्य मौलिक रूपकों का संकलन कर लेखक ने विगत काल की संस्कृति के कटाव को दूर और भावी पीढ़ी के लिए आदर्शपीठिका तैयार करने के

Knowledgeable Research *ISSN 2583-6633* Vol.02, No.02, September, 2023
An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal

दायित्व को उत्तरदायित्व पूर्ण ढंग से करने निभाया है। कथानक संवादों तकनीक उद्देश्य आदि सभी दृष्टियों से विवेच्य रेडियो रूपक संपुष्ट और समृद्ध है। अस्तु संस्कृत नाट्यवल्लरी एक सशक्त विद्या के संकलन का एक उत्कृष्टतम निदर्शन है।

सन्दर्भ सूची -

1. नाट्यशास्त्रावतारः पृ. 1
2. दशरूपक पृ. 12
3. सं.ना. व. - नाट्यशास्त्रावतार पृ. 1
4. सं. ना. व. - कवितायाः मूल्यम् पृ.65
5. सं. ना. व. - महाभिनिष्क्रमणम् पृ. 9
6. सं. ना. व.- प्रणय-सन्देशः पृ. 17
7. सं. ना. व. प्रणय-सन्देशः पृ. 26
8. सं. ना. व. पृथ्वीराज विजयः पृ. 31
9. सं. ना. व. पृथ्वीराज विजयः पृ. 35
10. सं. ना. व. धर्मस्य तत्त्वं निहितं गुहायाम् पृ. 54

संकेत - सं.ना.व. - संस्कृत नाट्य वल्लरी

Received Date:11.09.2023
Publication Date: 30.09.2023